दिल्ली किसकी है?

ज़मीन और आवास

ख़तरा केन्द्र (संचल फाउंडेशन)

अप्रैल 2004

92H, तीसरी मंजिल, प्रताप मार्केट, मुनीरका, नई दिल्ली–110067
फोनः (011) 26714244, 26187806 ई मेलः haz_cen@vsnl.net

ज़मीन और आवास

बस्तियों की स्थिति

2001 की जनगणना के अनुसार दिल्ली की कुल आबादी 138 लाख के करीब है। अर्थात् 27 लाख परिवार। इनमें से बमुश्किल एक चौथाई परिवार ऐसे हैं जो पक्की कालोनियों में रहते हैं। बाकी तीन चौथाई या तो झुग्गी–झोपड़ी अथवा अनधिकृत कालोनी या पुनर्वास बस्ती में रहने के लिए मजबूर हैं। एक छोटा सा तबका शहरी गांवों में भी रहता है। इसके अलावा बहुत से लोग ऐसे भी हैं जो बेघर हैं।

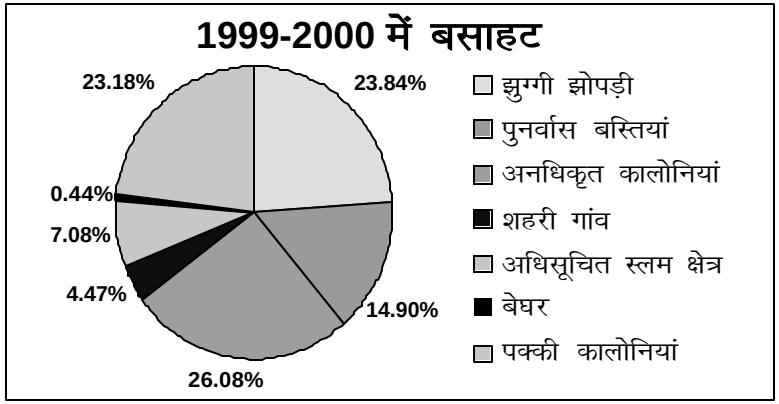

स्त्रोत : (i) दिल्ली नगर निगम, 1994; (ii) सिरोहा, 2001 (iii) सोशियो इकोनॉमिक प्रोफाइल ऑफ दिल्ली 2000-2001, दिल्ली सरकार, 2001; (iv) स्टेटस रिपोर्ट फॉर दिल्ली 21, भारत सरकार, 2001

झुग्गी झोपड़ी और अनधिकृत कालोनियों की संख्या पिछले 50 वर्षों से लगातार बढ़ती जा रही है। 1951 में करीब 64,000 लोग झुग्गी–बस्तियों में रहते थे तो आज उनकी संख्या 32 लाख हो गई है। 50 साल पहले जहां सिर्फ 200 झुग्गी–बस्तियां थी वहीं आज अनुमानित 1160 बस्तियां हैं। अगर आंकड़ों के ऊपर नज़र दौड़ायी जाये तो यह भी देखने को

मिलेगा कि 1971 और 1981 के बीच अचानक झुग्गी-बस्तियों की संख्या घट गई लेकिन उसके बाद फिर से उनमें वृद्धि हुई। इसका मुख्य कारण 1975-77 का आपातकाल था जिसमें तकरीबन 800 झुग्गी-बस्तियों को उजाड़ दिया गया और करीब 1.75 लाख परिवारों को पुनर्वास बस्तियों में बसाया गया। परन्तु अगर झुग्गी बस्तियों की कुल आबादी को देखें, तो उसमें विशेष गिरावट नहीं आई। फर्क केवल इतना हुआ है कि जहां 1971 में 1,124 बस्तियों में 3 लाख की आबादी थी वहीं वर्तमान में 1,160 बस्तियों में 32 लाख की आबादी है। यानि कि बस्तियों को उजाड़ने के बावजूद लोग लगातार उन्हीं में बसे जा रहे हैं और इन बस्तियों में आबादी बढ़ती जा रही है जिससे जीने का स्तर लगातार गिरता जा रहा है।

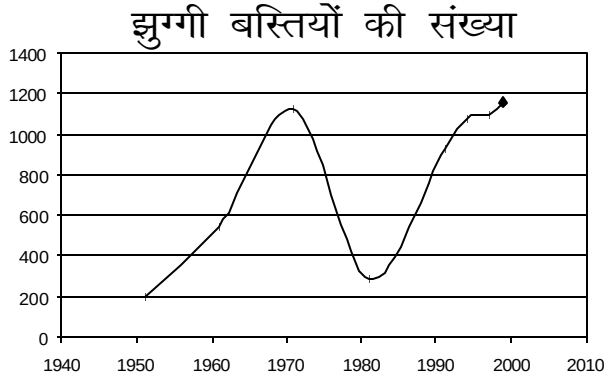

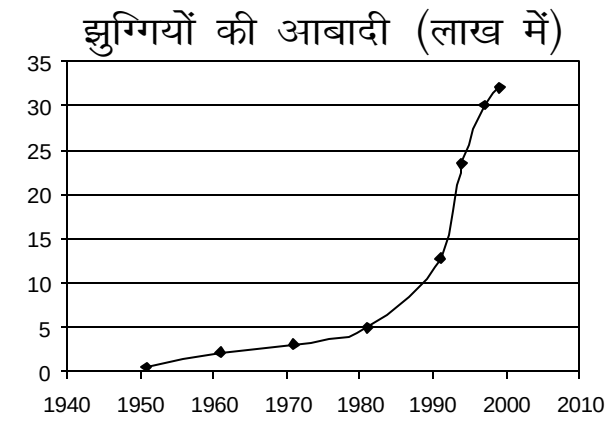

इसी प्रकार अगर अनधिकृत कालोनियों को देखा जाए तो 1977 में 567 कालोनियों को नियमित किया गया था और उस समय कहा गया था कि इसके बाद अब कालोनियों को बढ़ने नहीं दिया जाएगा। परन्तु अगले 20 वर्षों में करीब 1,400 कच्ची कालोनियां दुबारा बन गई जिनमें करीब 30 लाख लोग रह रहे हैं। अब दोबारा पेशकश चल रही है कि इनमें से 1,071 कच्ची कालोनियों को फिर से नियमित किया जाये। परन्तु शहर के कई जाने-माने योजनाकार और प्रशासक हैं जो कि मानते हैं कि ऐसा करने से शहर के मास्टर प्लान का उल्लंघन होगा और शहर का ढांचा चरमरा जाएगा। इससे सवाल पैदा होता है कि आवास और ज़मीन के बारे में शहर के मास्टर प्लान में क्या योजना बनी थी।

नियोजित घर

दूसरे मास्टर प्लान में लिखा है कि 1981 में करीब 3 लाख परिवार ऐसे थे जिनके पास या तो घर बिल्कुल नहीं था या किसी और के साथ रह रहे थे या उनका मकान रहने लायक नहीं था। इसके अलावा योजनाकारों ने अनुमान लगाया था कि अगले बीस वर्षों में, यानि कि 2001 तक, 13.2 लाख परिवार शहर में बसने आयेंगे। इसलिए योजना में तय हुआ कि इन 20 वर्षों में 16.2 लाख नए घरों की आवश्यकता

1981-2001 के बीच लक्षित घर

अवधि	नये घर	सालाना औसत
1981-86	323,000	65,000
1986-91	379,000	76,000
1991-96	434,000	87,000
1996-2001	483,000	97,000
कुल	**1,619,000**	**81,000**

स्त्रोतः दिल्ली मास्टर प्लान, 2001

होगी जो प्रति वर्ष 80,000 घर बनाने से पूरा हो सकता है। इनमें से 43% घर डी डी ए तथा सहकारी समितियों द्वारा बनाये जायेंगे, 25% घर लोग खुद ऐसे प्लॉटों पर बनायेंगे जहां नींव डली हो और 17% घर लोग अपने खुद के प्लॉट पर बनायेंगे।

अगर 1981 से 2001 तक का ब्यौरा देखें तो पता चलता है कि डी डी ए 1995 तक लगभग 5.5 लाख मकान बना पाया था (लक्ष्य का 34%)। इसमें भी जहां डी डी ए द्वारा बनाए गए मकान और पुनर्वास के लिए प्लाट का अनुपात उतना ही था जितना तय किया गया था, वहीं व्यक्तिगत प्लाट की तादाद 17% से बढ़कर करीब 32% हो गई। इसका मतलब यही हुआ कि जहां एक तिहाई घर ही बनें उनमें भी ज़्यादातर घर सम्पन्न वर्ग को मिले।

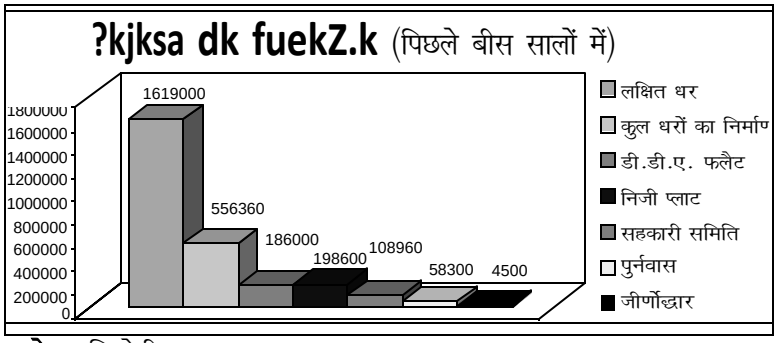

स्त्रोतः सिरोही, 2001

कमज़ोर वर्ग के लिए कुल घरों में से 68% का प्रावधान था। परन्तु उनके लिए जहां कम घर बने हैं, वहीं अमीरों के लिए लक्ष्य से 3 गुना अधिक मकान बन चुके हैं। इसी से समझ में आता है कि डी डी ए और योजनाकार किस वर्ग को ज़्यादा अहमियत देते हैं। डी डी ए के करीब 2,500 घरों का सर्वे करके ख़तरा केन्द्र को यह भी पता चला है कि जनता फ्लैटों के केवल 40% और एल आई जी फ्लैटों के मात्र 19% घरों में ऐसे परिवार रहते हैं जिनको सही मायने में कमज़ोर वर्ग माना जा सकता है।

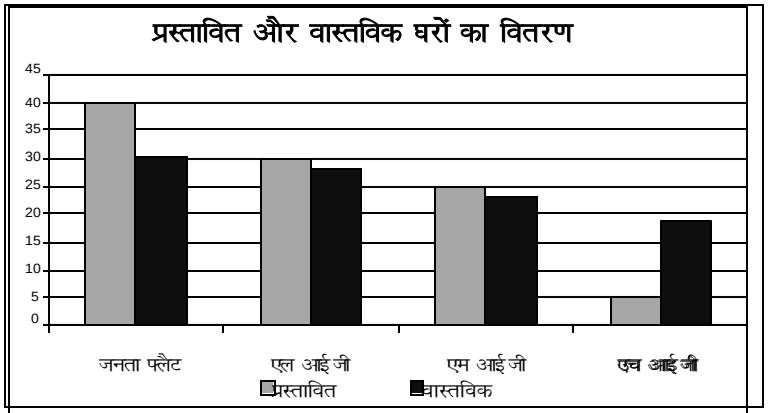

स्त्रोतः ट्रिप, 2000

स्थापन विस्थापन

जब कामकाजी परिवारों को अधिकृत रूप से घर मुहैया नहीं किया जायेगा तो निश्चित है कि वे केवल अनधिकृत रूप से ही ज़मीन पर बस सकते हैं। इस तरह से झुग्गी झोपड़ीवासियों ने करीब 400 हे. ज़मीन पर मजबूरन अपने घर बनाए हैं जबकि कच्ची कालोनीवासियों ने करीब 5,000 हेक्टेयर की ज़मीन खरीदकर अपने मकान बनाए हैं। परन्तु चूंकि सरकारी एजेंसियों ने अधिकृत रूप से लक्षित मकान बनाये ही नहीं हैं इसलिए इन सबको अवैध ठहराया जाता है। यदि वे बाकी 11 लाख घर बन जाते जिनका प्रावधान था तो झुग्गी-झोपड़ी और कच्ची बस्ती में बसे 67 लाख लोगों (12 लाख परिवारों में से अधिकांश) को निश्चित रूप से वैध मकान मिल गए होते। परन्तु इस तथ्य को नज़रअंदाज़ करते हुए बार-बार सरकारी और कानूनी तंत्र इस पूरी आबादी को विस्थापित करने की बात करता है।

वैसे विस्थापन और पुनर्वास से लोगों की ज़िंदगी कोई खास सुधरती नहीं है। चाहे वो 1975 का विस्थापन हो या 2001 का पुनर्वास। कई सर्वेक्षणों द्वारा पाया गया है कि वहां पर रहने वाले लोगों की स्थिति में सुधार के बदले उतार ही आया है। ऐसी पुनर्वास बस्तियों में सबसे बड़ी दिक्कत रोज़गार की है। लोगों का जब पुनर्वास किया जाता है तो उनको उस समय के शहर के दूर-दराज के इलाकों में ही बसाया जाता

है चूंकि सरकार का मानना है कि वहीं पर ज़मीन उपलब्ध है। ऐसे क्षेत्रों में जहां पहले से कोई विकास न हुआ हो वहां पर रोज़गार पाना मुश्किल ही है। वैसे कच्ची कालोनियां भी ऐसे दूर-दराज़ के इलाकों में बसी हैं जहां पर ज़मीन खरीदने की कुछ सुविधा है। इसीलिए ऐसी बस्तियों के लोगों को काम पर आने-जाने के लिए अधिक फासला तय करना पड़ता है, चाहे वो बस से हो या साइकिल से।

काम की खोज

लोग शहर में काम ढूंढने ही आते हैं। इसलिए उन्हें जहां काम मिलेगा वे वहीं पर बसने की कोशिश करेंगे। यदि उस क्षेत्र में रहने के लिए अधिकृत जगह नहीं मिलती है तो स्वाभाविक है कि जिस मज़दूर वर्ग के पास पूंजी न हो वह वहीं आस-पास के खाली इलाके में अपनी झोपड़ी डालने की कोशिश करेगा। इस प्रक्रिया में नए प्रवासी परिवार को उन परिवारों का सहारा मिलता है जो पहले ही अपने प्रदेश या गांव से दिल्ली आ चुके होते हैं। इसी तरह हर अंचल के लोग धीरे-धीरे अपनी जाति और गांव के लोगों को ढूंढकर वहीं पर काम भी पाते हैं और रहने की जगह भी।

जब लोगों को काम से दूर बसाया जाता है तो तय है कि उनकी जीविका नहीं चलेगी। इसलिए रोज़ी-रोटी की खातिर वे फिर उसी जगह पर लौट आएंगे जहां पर काम है। जैसे कि इमरजेंसी के दौरान जब 26 पुनर्वास बस्तियों को बसाया गया तो उससे झुग्गी-झोपड़ी बस्तियों की आबादी की बढ़ोत्तरी में कुछ तात्कालिक रोक तो ज़रूर लगी, परन्तु उसके बाद के वर्षों में झुग्गियों की आबादी 6 गुना हो गई। जब इस प्रकार से बस्तियों में घनत्व बढ़ेगा, तो इससे यही समझा जा सकता है कि लोग काम की खातिर ही शहर में आते हैं और उनके बसने की प्रक्रिया भी काम से जुड़ी हुई है।

झुग्गी-झोपड़ी, पुनर्वास बस्ती और अनधिकृत कालोनी के निवासियों का सरकार द्वारा कभी कोई व्यापक सर्वेक्षण नहीं हुआ है इसलिए इनके बारे में कोई अधिकृत आंकड़े भी उपलब्ध नहीं हैं। परन्तु साझा मंच द्वारा किए गए सर्वेक्षण से कुछ तथ्य उजागर हुए हैं। इनमें रहने वाले 1,600 घरों के सर्वे से पता चला कि दो-तिहाई से ज़्यादा लोग छोटे परिवार वाले थे, जिनकी उम्र कम थी, शिक्षित थे, 10 वर्ग मीटर से कम जगह में निवास करते थे, हैण्डपम्प और सार्वजनिक शौचालय तथा प्राइवेट डाक्टर पर निर्भर थे। अधिकांश कामकाजी लोग सर्विस में थे या दिहाड़ी मज़दूर थे, 2,000 रुपये प्रति माह से कम कमाते थे और पैदल, साइकिल या बस से सफर करते थे। झुग्गी-झोपड़ियों में

झुग्गी बस्तियों का फैलाव

ज़ोन		कुल आबादी (लाख में)	झुग्गीवासियों की आबादी (लाख में)	कुल आबादी का प्रतिशत
A	**पुराना शहर**	10.60	1.10	10.00
B	**करोल बाग**	4.20	1.40	33.30
C	**सिविल लाइंस**	7.50	3.00	40.00
D	**नई दिल्ली**	7.50	1.97	26.30
E	**यमुना पार**	21.30	3.01	14.10
F	**दक्षिण दिल्ली - I**	12.70	5.97	47.00
G	**पश्चिम दिल्ली - I**	14.30	2.96	20.70
H	**उत्तर-पश्चिम दिल्ली - I**	17.70	3.29	18.60
I	**दक्षिण दिल्ली - II**	2.50	0.10	4.00
J	**पश्चिम दिल्ली -II**	2.50	0.87	34.80
K	**पश्चिम दिल्ली - III**	5.50	0.50	9.00
L	**उत्तर-पश्चिम दिल्ली - II**	0.00	0.00	0.00
M	**उत्तर-पश्चिम दिल्ली - III**	3.50	0.66	18.00
N	**यमुना नदी**	0.00	0.00	0.00
O	**नई दिल्ली**	2.50	1.30	52.00
P		3.00	0.10	3.30
कुल		**115.25**	**26.23**	

स्त्रोत : दिल्ली नगर निगम, 1999

अनौपचारिक बस्तियों की स्थिति (प्रतिशत में)			
कार्य की प्रकृति	**पुनर्वास बस्ती**	**झुग्गी झोपड़ी**	**अनधिकृत कालोनी**
आफिस/सेवाएं	34.80	41.70	23.90
बड़ी फैक्टरी	3.50	0.66	15.30
छोटी फैक्टरी	19.20	2.53	21.70
दुकान	11.60	10.12	14.29
घरेलू काम	2.50	8.15	1.92
ठेला	2.00	1.78	2.75
दिहाड़ी	26.30	35.05	20.05
अकुशल	20.16	72.25	5.93
अर्धकुशल	19.38	4.62	7.70
कुशल	60.46	23.12	86.3
पक्का मकान	67.44	16.20	46.72
कच्चा मकान	32.56	83.79	53.28

स्त्रोतः साझा मंच, 2000

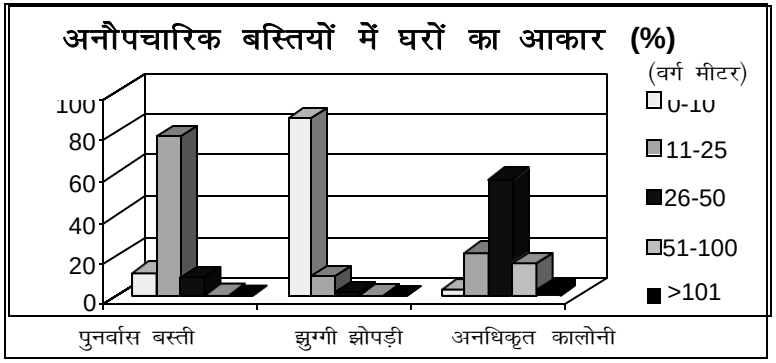

स्त्रोतः ख़तरा केन्द्र, 2003

अधिकांश मज़दूर अस्थायी और अकुशल काम में लगे हुए थे। झुग्गी-झोपड़ियों के मुकाबले में पुनर्वास बस्तियों और अनधिकृत कालोनियों की स्थिति बेहतर थी। ये आंकड़े दर्शाते हैं कि ऐसी बस्तियों में रहने वाले लोग किस प्रकार से शहर की अर्थव्यवस्था की रीढ़ की हड्डी हैं। फिर भी इन्हें बार-बार शहर से बाहर निकालने के लिए सम्पन्न वर्ग बेचैन हो उठता है।

आवास सुधार नीति

झुग्गियों को लेकर तीन तरह की नीतियां हैं। पहली नीति में माना जाता है कि झुग्गी में न्यूनतम सार्वजनिक सुविधाएं दी जाएं। दूसरी में, यदि ज़मीन मालिक को एतराज़ न हो, सड़कों को सीधा करके, प्लाट

दिल्ली की नई पुनर्वास बस्तियां

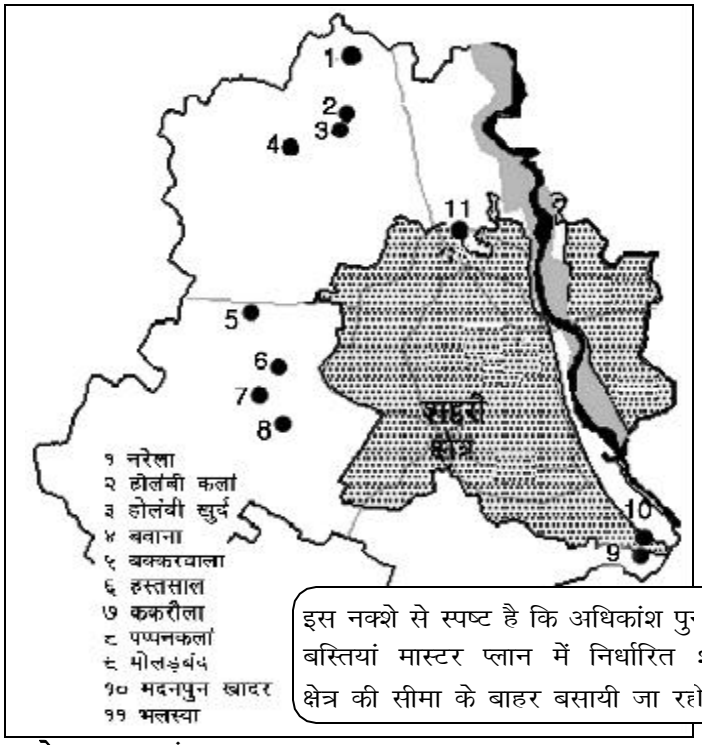

स्त्रोतः साझा मंच, 2002

काटकर, हर परिवार को घरेलू सुविधाएं देने का प्रावधान है। तीसरी नीति में 1998 से पहले बसी झुग्गियों को विस्थापित करने की बात कही गई है। पहली योजना में एक झुग्गी पर 4,000 रुपये खर्च करने का प्रावधान है, दूसरी में 20,000 रुपये और तीसरी में 46,000 रुपये। आम समझ के स्तर पर देखा जाए तो सबसे कम खर्चीला विकल्प है कि झुग्गी जिस स्थान पर है उसको अपनी ज़िन्दगी वहीं बेहतर बनाने की कोशिश करने दी जाये। इससे खर्च भी कम होगा और लोगों की ज़िन्दगी भी नहीं बिखरेगी । परन्तु आंकड़े बताते हैं कि सरकार सबसे अधिक खर्चा विस्थापन पर करती है। इसके पीछे शायद उस भूमि–मालिक की ताकत है जो भूमि को केवल मुनाफे की नज़र से देखता है।

बस्तियों पर सरकार द्वारा खर्च

वर्ष	योजना	प्रभावित परिवार	खर्च (करोड़ रुपये)
1990-2001	झुग्गी बस्तियों में स्थानीय सुधार पर्यावरणीय सुधार	600,000	552.11
1990-2001	विस्थापन	8,000	109.89
1980-2001	पुनर्वास बस्ती में सुविधायें	240,000	921.85

स्त्रोतः इकोनॉमिक सर्वे ऑफ दिल्ली 2001-2002

इसी प्रकार कच्ची कालोनियों के बारे में भी दो नीतियां सामने आई हैं। पहले में माना गया है कि ज़मीन की कीमत अदा करके और जुर्माना जमा करके कच्ची कालोनी का नियमतिकरण हो सकता है। उसके बाद विकास शुल्क भरने पर उस कालोनी में पानी, बिजली, सीवर इत्यादि नागरिक सुविधाएं पहुंचाई जा सकती हैं। इस नीति में इस तथ्य को नज़रअंदाज़ किया जाता है कि लोगों ने पहले से ही ज़मीन खरीद ली है और अपनी मेहनत से न्यूनतम सुविधाओं का बंदोबस्त किया है। जिन तमाम ठेकेदारों और प्रॉपर्टी डीलरों ने कच्ची कालोनियों को बसाकर करोड़ो रुपया अवैध तरीके से कमाया है, उन सबको इस नीति में बरी कर दिया जाता है। विकास शुल्क को ही देखा जाए, जो कि फिलहाल 514 रुपये प्रति मीटर के हिसाब से है (ख़तरा

केन्द्र के तकनीकी आँकलन के अनुसार यह भी वास्तविक खर्च से करीब 200 रुपये ज़्यादा है) तो 6 लाख परिवारों को करीब 1,000 करोड़ रुपया जमा कराना पड़ेगा। अर्थात इतनी बड़ी मेहनतकश आबादी से नाजायज़ वसूली करके सरकार बहुत बड़ी रकम कमाने के चक्कर में है।

दूसरी नीति में तो बाशिंदों को नियमतिकरण की भी छूट नहीं मिलती। यह नीति कहती है कि जहां पर भी सार्वजनिक भूमि किसी और उपयोग के लिए निर्धारित है या कोई विकास परियोजना निर्मित होने वाली है या तकनीकी रूप से सुविधाएं नहीं पहुंचाई जा सकती हैं या 1993 की तारीख में आधे से ज़्यादा प्लॉट खाली थे या ज़मीन हरित पट्टी में आती है, इत्यादि, इत्यादि – तो वहां से लोगों के मकानों को ढहा कर उनको हटाया जाएगा। वैध मकानों के अभाव में लोग कहां जाएंगे और क्या करेंगे इसका कोई जवाब नीति नहीं देती है। प्रशासकों की केवल यह आशा रहती है कि वे या तो गायब हो जाएं या दिल्ली के बाहर जाकर राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र में बसें। परन्तु असलियत बताती है कि जब तक दिल्ली शहर में काम मिलेगा, तब तक यहां पर दूसरे राज्यों से लोगों का आवागमन होता रहेगा। और झुग्गी व कच्ची कालोनी की संख्या तब तक कम नहीं होगी जब तक वैध आवास की व्यवस्था न हो।

ज़मीन का हिसाब

अब सवाल आता है कि दिल्ली राज्य में लोगों के बसने के लिए खाली ज़मीन है कि नहीं? सरकार का दावा है कि ज़मीन है ही नहीं और अदालत भी कह चुकी है कि ज़मीन का नया उत्पादन नहीं हो सकता। परन्तु तथ्य कुछ और ही बताते हैं। प्रदेश का पूरा क्षेत्रफल 148,639 हेक्टेयर है। पहले मास्टर प्लान (1962-1981) के दौरान इसमें से 17,278 हेक्टेयर से बढ़कर 44,736 हेक्टेयर का शहरीकरण हो चुका था। और दूसरे मास्टर प्लान (1982-2001) में लिखा है कि 48,777 हेक्टेयर में 24,000 हेक्टेयर शहरी क्षेत्र और जोड़ा जायेगा। इस ज़मीन का आधा रहने के लिए निर्धारित किया गया है।

प्रस्तावित शहरी विस्तार	
भू-उपयोग	**%**
घरेलू	45-55
व्यवसायिक	3-4
संस्थागत	6-7
मनोरंजन	15-20
सार्वजनिक	8-10
आवागमन	10-12

स्त्रोत : दिल्ली मास्टर प्लान 2001

यह स्पष्ट नहीं है कि इस पूरी ज़मीन में से कितनी अधिग्रहित हुई, कितनी विकसित हुई और कितनी वितरित हुई। परन्तु डी डी ए के अलग-अलग प्रकाशनों में यह पाया गया है कि द्वारका, नरेला, रोहिणी, वसन्तकुंज इत्यादि में करीब 9,000 हेक्टेयर ज़मीन रिहायशी इलाके के लिए अधिग्रहित की गई है। कुल मिलाकर डी डी ए के पास आवास के लिए करीब 32,000 हेक्टेयर ज़मीन होनी चाहिए। इसमें से डी डी ए केवल करीब 11,000 हेक्टेयर का हिसाब दे पाती है। बाकी 21,000 हेक्टेयर का क्या हुआ, इस प्रश्न का बार-बार पूछने के बाद भी कोई जवाब नहीं आता। यदि इस गायब ज़मीन में से पुनर्वास (2,400 हेक्टेयर) और सहकारी समिति (2,300 हेक्टेयर) की भूमि को भी घटा दिया जाए फिर भी 16,300 हेक्टेयर ज़मीन बचती है। यदि सरकारी मानक को मानकर चलें तो हर हेक्टेयर में 100 परिवार बस सकते हैं। इस गणित को देखें तो जिस ज़मीन का हिसाब नहीं मिलता है उस पर कम से कम 16 लाख परिवार घर बना सकते हैं जो कि अनौपचारिक बस्तियों में रहने वालों और बेघरों की कुल संख्या से भी अधिक है।

यह ज़मीन किसी और काम में लगा दी गई है या अभी भी शहर में मौजूद है, कहना मुश्किल है। जब तक डी डी ए और अन्य ज़मीन मालिक अपना हिसाब-किताब पारदर्शी रूप से जनता के सामने नहीं रखेंगे तब तक इस सवाल का जवाब पाना संभव नहीं है। परन्तु साझा

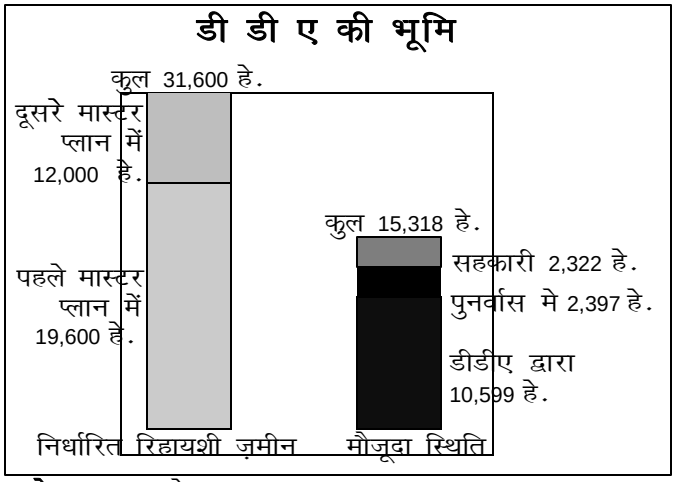

स्त्रोतः ख़तरा केन्द्र, 2003

मंच के सदस्य संगठन जहां-जहां काम करते हैं, वहां उनको आस-पास में खाली ज़मीन नज़र आती है। कम से कम तीन जगहों पर इसका औपचारिक सर्वे भी हुआ है और तीनों जगहों पर रहने लायक ज़मीन मौजूद पाई गई है। अम्बेडकर नगर जैसी घनी आबादी वाले इलाके में भी पर्याप्त ज़मीन मिल सकती है। इसी प्रकार पंजाब गार्डन के पास भी पर्याप्त ज़मीन उपलब्ध है। और जौनापुर क्षेत्र में ग्रामसभा की ज़मीन है। इन तीनों को देखा जाए तो अगल-बगल के इलाके में सम्पन्न परिवारों को बसने की पूरी छूट है। दक्षिण में सैनिक फार्म और पश्चिम में पंजाबी बाग जैसी कालोनियां इसके उदाहरण हैं। इन्हीं क्षेत्रों में पर्याप्त काम भी है, चाहे वह पत्थर काटने का हो या फिर दफ्तरों में या औद्योगिक केन्द्रों में। परन्तु फिर भी इनमें मज़दूरों को बसने की इजाज़त नहीं है।

जन भागीदारी

अगर किसी राजनैतिक दबाव से ज़मीन का हिसाब-किताब साफ हो

पंजाब गार्डन

दक्षिणपुरी का सर्वे

इन नक्शों से पता चलता है कि पंजाबी बाग और अम्बेडकर नगर जैसी घनी आबादी वाले इलाकों में भी खाली जगह है जहां लोगों को बसाया जा सकता है।

जाता है और मेहनतकश जनता को अपनी बसाहट बनाने की अनुमति मिल जाती है तो फिर सवाल आता है कि आवास बनाने के लिए कितना धन लगेगा। साझा मंच के सर्वे के अनुसार 80 फीसदी लोग अपना मकान खुद बनाने में सक्षम हैं। अगर वे झुग्गी-झोपड़ी में रहते हैं तो घर पर वे औसतन 20,000 रुपया खर्च करते हैं और यदि कच्ची कालोनी में तो खर्चे की रकम बढ़कर 50,000 हो जाती है। इसका मतलब है कि इतने ही पैसों में घर का बंदोबस्त करने की आवश्यकता है। डी डी ए का सबसे सस्ता जनता फ्लैट, जो करीब 3 लाख रुपये में मिलता है, भी इस आवाम के लिए बहुत महंगा है। परन्तु यदि लोगों को वैध मानकर उनको अपनी क्षमतानुसार घर बनाने दिया जाए तो वे इस कार्य में अपनी सारी कलाएं इस्तेमाल कर सकते हैं। आखिरकार ये वही लोग हैं जो सम्पन्न परिवारों के घर बनाते और चलाते हैं।

इसकी मिसाल बादली मोड़, हैदरपुर में मिल जायेगी जहां 1990 में निर्माण मज़दूर पंचायत संगम के 250 परिवारों ने अपनी बस्ती बनायी। बीच में 12 फुट चौड़ी सड़क छोड़कर दोनों तरफ ईंट के मकान बने। चार मकानों को एक आंगन के चारों तरफ बनाया गया। इसके पीछे मंशा यह थी कि यदि एक मकान में आग लगती है तो पूरी बस्ती में न फैले। बस्ती के बीच में लोगों ने 3 सार्वजनिक शौचालय और स्नानघर बनाए, एक छोटे स्कूल का निर्माण किया और एक स्वास्थ्य केन्द्र के लिए भी जगह दी। पिछले 10 वर्षों से यह बस्ती स्वावलम्बी तौर पर अपने ढंग से चल रही है। इसी प्रकार से भलस्वा में अंकुर से जुड़ी हुई महिलाओं ने एक साझे आंगन को घेरे हुए 6 मकानों की योजना को धिक्कार दिया क्योंकि प्लॉट लॉटरी द्वारा आबंटित किये गये थे और अगल-बगल के घरों में लोग एक दूसरे से परिचित नहीं थे। इसलिए आंगन आपसी कलह का कारण बन जाता। नगर निगम की योजना को पलटते हुए महिलाओं ने सीधी लाईन में अपने घर बनाएं।

विकास या विनाश

अगर सरकार ने अपनी ज़िम्मेदारी नहीं निभाई है और 11 लाख घर नहीं बनाये हैं, तो जनता ने अपनी मेहनत से 13 लाख मकान बना लिये हैं। परंतु इस रचनात्मक काम को समझने और सराहने की जगह सरकार 'विकास' के नाम पर उन्हीं मकानों को ढहाने में लगी है। 2004 के पहले हिस्से में यमुना पुश्ता पर स्थित 20,000 से अधिक परिवारों को डी.डी.ए और एम.सी.डी के बुलडोज़रों ने रौंद दिया। उनकी जगह पर संस्कृति और पर्यटन मंत्रालय राष्ट्रीय पर्यटन परिसर बनाने जा रही है जिसमें देशी-विदेशी पर्यटकों के लिये मनोरंजन के साधन होंगे। पुश्ते पर बचे 40,000 और परिवारों पर भी गाज गिरने वाली है क्योंकि कहीं कॉमनवेल्थ खेल गांव बनने वाला है तो कहीं उद्यान और कहीं व्यवसायिक भवन। इसी प्रकार मेट्रो रेल के पथ में जितनी भी बस्तियां आई हैं, उन्हें भी निर्ममता से उजाड़ दिया गया है।

उत्तर पश्चिम में रोहिणी की विशाल उपनगरी बनी है। अब उसके विस्तार के बगल के कांझावाला क्षेत्र में भूमि अधिग्रहण की प्रक्रिया आरम्भ है। क्या यह मात्र संयोग की बात है कि उसी भूमि पर 100 से अधिक अनधिकृत कालोनियां बसी हुई हैं? इन कालोनियों में जनता ने अपना एक-एक पैसा जोड़ कर ज़मीन खरीद कर अपना घर बनाया है। 10 साल से उनको आश्वासन दिया जा रहा है कि उनकी बस्तियों का नियमतिकरण हो जायेगा परंतु इन आश्वासनों के पीछे मात्र राजनैतिक कूटनीति की चालबाज़ी है।

सरकार अखबारों में इसी प्रकार प्रचारित करती है कि लोगों को मुफ्त में पुनर्वासित किया जायेगा। परंतु यह दावे भी खोखले हैं। पुश्ता की बेदखली में मात्र एक-चौथाई परिवारों को ही प्लाट मिलने का हकदार पाया गया है। वह प्लाट भी कम से कम 7,000 रुपये देने पर मिलता है। कुछ इलाकों में तो डी डी ए 20,000 रुपये ले रही है। और वह प्लाट भी मात्र 5 या 10 वर्ष की लाईसेंस पर मिलता है। याने कि जिस समय तक लोग किसी तरह से दुबारा अपनी ज़िंदगी संवारेंगे, उसके बाद उन्हें दुबारा विस्थापित करने का मौका सरकार को मिलेगा।

ज़मीन का 'विकास' लोगों के विनाश के रथ पर ही सवार रहेगा। ऐसी स्थिति में एक जन-पक्षीय वैकल्पिक सोच की सख़्त ज़रूरत है जिसे नीति में बदला जा सके।

महिलाओं द्वारा नियोजन

दक्षिणपुरी क्षेत्र की वैकल्पिक योजना

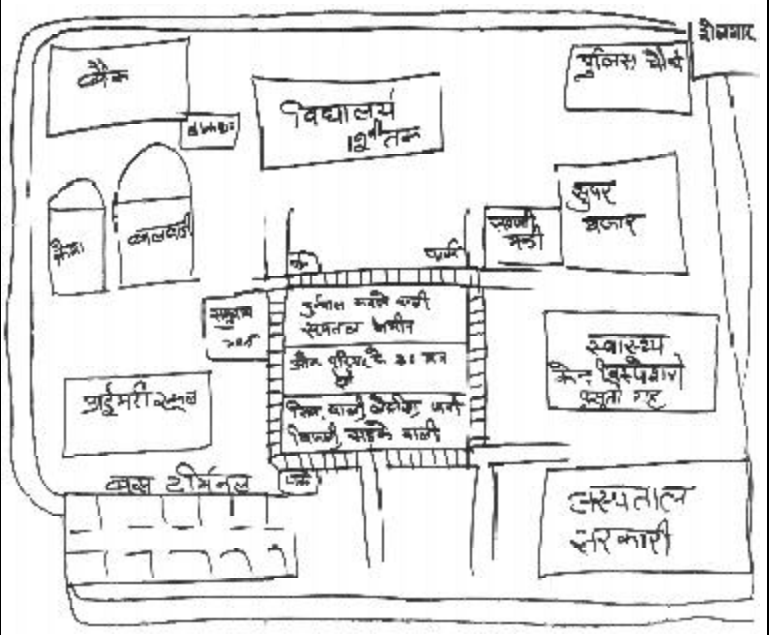

एक्शन इंडिया द्वारा आयोजित कार्यशाला में उपस्थित करीब 250 महिलाओं को चार समूहों में बाँटा गया और हर समूह ने अपनी बस्ती की वैकल्पिक योजना बनाई। इस मानचित्र में एक योजना दर्शाई गई है जिसमें साधनों, सुविधाओं और सुरक्षा का सकारात्मक रिश्ता बड़ी खूबसूरती से सामने आता है।

निर्माण की तस्वीर

इन सब तथ्यों और उदाहरणों से आवास के बारे में एक आम समझ सामने आती है।

- शहर की तीन-चौथाई जनता अपर्याप्त या अस्थिर घरों में रहती है।
- पिछले सिर्फ 25 वर्षों में कच्ची बस्तियों में लोगों का घनत्व 6 गुना बढ़ गया है।
- इस स्थिति का मूल कारण है कि सरकार ने वैध ज़मीन और मकान मुहैया नहीं करवाये।
- जो सरकारी मकान बने भी हैं उन पर मध्यम और उच्च वर्ग का कब्जा है।
- लोग शहर में काम के लिए आते हैं और काम व रहने की जगह के बीच एक अटूट रिश्ता है।
- इस कामकाजी आबादी का मासिक वेतन 2,000 रुपया प्रति माह के आस-पास है और काम तक पहुंचने के लिए वे या तो पैदल या साइकिल या बस से जाते हैं।
- लोगों को काम के पास उचित आवास देने के बजाय प्रशासन का पूरा ज़ोर विस्थापन पर है।
- विस्थापन अधिक महंगा तो है ही साथ ही साथ मेहनतकश लोगों की ज़िन्दगी को पूरी तरह से उजाड़ भी देता है।
- उपलब्ध आंकड़ों के मुताबिक शहर में पर्याप्त ज़मीन है और जहां-जहां सीमित सर्वेक्षण हुआ है वहां पर खाली ज़मीन दिखती भी है।
- अगर यह ज़मीन आवास के लिए उपलब्ध करवाई जाए तो तमाम लोगों को ढंग से बसाने के लिए ज़मीन की कोई कमी नहीं होनी चाहिए।
- ज़मीन के उचित बंटवारे और आवास की उचित नीति का विरोध पक्की कालोनी और प्रशासन के लोग ही करते हैं।

उपरोक्त तथ्यों से एक वैकल्पिक नीति की सम्भावना भी उभरती है। यह स्पष्ट है कि मेहनतकश लोगों के लिए आवास की सुविधा बाज़ार कभी नहीं दे पाएगा। इसके लिए एक ईमानदार सरकार को ही समझ बूझ कर कदम उठाना पड़ेगा। आम लोगों की जीने की अभूतपूर्व कोशिश, काम करने की अपार क्षमता, और शहर को सुधारने की जीवनशैली को बढ़ावा देते हुए एक वैकल्पिक नीति की कल्पना की जा सकती है जिसके मुख्य बिन्दु इस प्रकार से होंगेः

- वर्तमान कच्ची बस्ती के अगल-बगल 1 किलोमीटर के दायरे में रहने के लिए पर्याप्त ज़मीन ढूंढकर लोगों को दी जाए।
- हर परिवार को 50 मीटर का प्लॉट मिले जिसकी अधिकतम कीमत 10,000 रुपये हो।
- हर प्लॉट में उपयुक्त दर पर न्यूनतम नागरिक सुविधाएं दी जाएं।
- सुविधाएं विभाग द्वारा दी जाएं और उसमें ठेकेदारों का कोई दखल न हो।
- पानी, बिजली, सफाई इत्यादि के लिए प्रति माह उपयुक्त शुल्क लिया जाए।
- हर परिवार को आसान किश्तों पर कम से कम 50,000 रुपये का आवासीय कर्ज मिले।

मेहनतकश लोगों का अनुभव और ज्ञान यही बताता है कि इस प्रकार की नीति से लोगों को राहत मिलेगी। रोज़गार के साधन सुरक्षित रहेंगे, कर्ज़ लौटाने की क्षमता बची रहेगी, कार्यक्षमता में इजाफा होगा और शहर के आम लोगों की सृजन शक्ति में निखार आएगा।

संदर्भ सूचि

भारत सरकार, *दिल्ली सिटी–स्केप्स,* जन सम्पर्क विभाग, दिल्ली विकास प्राधिकरण, नई दिल्ली, बिना तारीख

भारत सरकार, *दिल्ली 1999 ए फैक्ट शीट,* नेशनल कैपिटल रीजन प्लानिंग बोर्ड, शहरी मंत्रालय, नई दिल्ली, 1999

भारत सरकार, *दिल्ली मास्टर प्लान 1990,* दिल्ली विकास प्राधिकरण, अकलांक पबिलकेशन, नई दिल्ली, 1999

भारत सरकार, *इकोनॉमिक सर्वे ऑफ दिल्ली,* योजना विभाग, नई दिल्ली, 2002

स्टेटस रिपोर्ट फॉर दिल्ली 21, दिल्ली अर्बन ऐनवायरनमेन्ट ऐण्ड इन्फ्रास्ट्रक्चर इम्प्रूवमेंट प्रोजेक्ट(डी यू ई आई पी पी), पर्यावरण एवं वन मंत्रालय (भारत सरकार), योजना विभाग (दिल्ली सरकार), नई दिल्ली, 2001

दिल्ली सरकार, *सोशियो–इकोनॉमिक प्रोफाईल ऑफ दिल्ली 2000-2001*, योजना विभाग दिल्ली, नई दिल्ली, 2001

दिल्ली नगर निगम, *रिर्पोट ऑन स्लमज़ इन दिल्ली,* स्लम विभाग, नई दिल्ली, 1999

ख़तरा केन्द्र, *ए पीपल्स हाउसिंग पॉलिसी,* नई दिल्ली, 2003

ट्रिप्प (ट्रांसपोर्ट रिसर्च एण्ड इंज्यूरी प्रिवेन्शन प्रोग्राम), *रेशनलाईज़ेशनऑफ इनफ्रास्ट्रक्चर स्टेण्डर्डज़,* आई.आई.टी, नई

सिरोही, प्रवेश, *इवैल्यूएशन ऑफ स्लम अपग्रेडेशन स्ट्रैटेजीज़ इन दिल्ली,* अप्रकाशित थीसिस, स्कूल ऑफ प्लैनिंग एण्ड आर्किटेक्चर, नई दिल्ली, 2001

अलमित्रा पटेल बनाम भारत सरकार (सी.डब्लू.पी. 888/1996)

ख़तरा केन्द्र (संचल फाउंडेशन)

अप्रैल 2004

92H, तीसरी मंजिल, प्रताप मार्केट, मुनीरका, नई दिल्ली–110067
फोनः (011) 26714244, 26187806 ई मेलः haz_cen@vsnl.net